॥ श्रीः ॥

मनुस्मृति और महाभारत से उद्धृत-

नारीधर्मप्रकाश.

जिस को
सर्वसाधारण भारत-भगनियों के
हितार्थ पन्नालाल बाकलीवाल
दिगम्बरी जैन सुजानगढ
जिला बीकानेर निवा-
सी ने बनाया.

उसे
गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास ने
अपने
"लक्ष्मीवेंकटेश्वर" छापाखाने में
छापकर प्रसिद्ध किया.

संवत् १९५१

कल्याण-(मुंबई)

इस पुस्तक का शुद्धिपत्र.

पृष्ठ.	पंक्ति.	अशुद्ध.	शुद्ध.
२	२३	जैसे	जैसे
३	७	पतिव्रता धर्म	पतिव्रत धर्म
१	५	परगुरु	परमगुरु
७	२२	नाश करे	नारि करै
८	७	मन से	मन में
८	१९	गृहकाज हि	गृहकाज हिं
१०	१७	करनेवाली को	करनेवालों को
१०	१८	तथा योग्य	यथ योग्य
११	७	स्वामियों के	स्वामी के
१३	५	चोरी	चारी
,,	२०	करें;	करें;
,,	२५	यह	उसे
१४	२	नहीं	न हो
१७	११	अपाप	पाप
,,	२३	अकसर	अवश्य
१८	१६	बहुत बहुत	बहुतसी स्त्रियें
१९	३	पति न	पति में न
,,	६	डालते हैं	लेते हैं
२०	३	सामने सामने	सामने ही
,,	६	बिरादरी	बिरादरी की
,,	१२	अपने	अपने में
२१	२८	और और	और
२२	७	खुले	खुले
,,	१६	जरूर हो	जरूर ही
२३	३	इसी से	जिस से
,,	३	गहने की	गहने ही
,,	२६	बूढ़ी होय	बूढ़ी न होय
२४	२	चरपाई में से	चारपाई पर से
,,	१७	उस प्रकार	इस प्रकार

पृष्ठ.	पंक्ति.	अशुद्ध.	शुद्ध.
,,	१८	वन्पान	बन्धन
,,	२१	पीरे २	धीरे २
,,	२२	क्लेश पहीं	क्लेश नहीं
२६	५	कारण हैं	कारण ही
२७	११	असरा	आसरा
,,	१३	मोडती	मोडतीं
,,	२२	उद्धर	दुर्धर
२८	७	खड	खंड
,,	१४	सन्य में	सत्य से
,,	१४	करके	करके ही
,,	२९	होता तो	होता हो तो
२९	२	महिने	महीने
,,	११	जायगे	जांयगे
,,	१२	अंततक	आजतक
,,	१६	जायगी	जांयगी
,,	२५	अवश्यकता	आवश्यकता
३०	८	मदभापिणी	मृदुभाषिणी
,,	१९	और	तो
,,	२१	रागी	रोगी
,,	२३	अपने स्नेह	अपने स्नेही
३१	७	करतीं	करती हैं
३२	२२	पापण	पोषण
३५	१३	ऐसे	ऐसे ही
,,	१७	धर्म करने	धर्म करने का
३६	१७	एक	यह
३६	२०	होकर	न होकर
३७	२२	पिताओं	मातापितओं
३८	२०	विनवती	विनयवती

समर्पण.

श्रीयुत पंडितशिरोमणि श्रीगोवर्धनजी योग्य,

विद्वदग्रगण्य !

आप को 'कन्याहितकारिणी' देख मन अति प्रफुल्लित हुआ. तब से यह इच्छा बलवती रही कि, आप को उस के परिवर्तन में क्या भेट दूं. परंतु ऐसी कोई अनुपम वस्तु न पाई. तब मन मार जीहार बैठ रहा तत्पश्चात् यह "नारीधर्मप्रकाश" नामक पुस्तक रच आप के करकमल में अर्पण करता हूं. आशा है कि. इस को आप अपनायकर स्वीकार करेंगे. यद्यपि इस पुस्तक में कोई गुण नहीं, तथापि आप के सत्संगत से यह समस्त गुणो की खान हो जायगी. क्योंकि, 'पारस परस कुधातु सुहाई'।

ग्रंथकार.

भूमिका.

विदित हो कि, आजकल बहुतसे विद्वद्गणों ने अपनी अनेक युक्तियों से भारतवर्ष में पूर्वकाल की सी सुदशा होने के अर्थ; विद्या, धन, धर्म, राज्यमान्नता और परस्पर एकता आदि की उन्नति करना मुख्य उपाय निश्चय किये हैं इन में से विद्या की उन्नति करना प्रधान उपाय समझकर जगह२ स्कूल, मदरसे, पाठशालायें खोलीं और दिनोदिन खुली जाती हैं; परन्तु उन में विदेशीय भाषा के द्वारा सत्शिक्षा होने की अपेक्षा उल्टा कुशिक्षा का ही प्रचार अधिकतर होता जाता है; जिस से हमारे इस आर्य्य देश की प्राचीन सुरीति नीति का लुप्तप्राय हो गया. क्यों कि, पूर्व सुदशा का प्रकाश पूर्वकालिक संस्कृत विद्या की उन्नति से भिन्न किसी प्रकार से होना असंभव है. इस कारण संस्कृतविद्या और मातृभाषा (देवनागरी) का प्रचार करने के अर्थ सच्चे देशहितैषी विद्वद्गण अनेक उपाय कर रहे हैं. उन उपायों में से स्त्रियों को धर्मशास्त्रादि द्वारा सत्शिक्षा दे कर पंडिता करना सर्वापेक्षा मुख्य समझा गया है. क्यों कि, बालक को सत्शिक्षा ग्रहण करने का समय चार(४) वर्ष की उमर से लगाकर दश(१०)वर्ष की उमर तक का है इस समय में बालक के कोमल हृदय में जैसी शिक्षा का बीज और असर पडता है वही जन्म पर्यन्त अंकित रहता है। इस अमूल्य समय में बालक जब अपनी मूर्खा माता भगिनियों में रहता है तौ सत्शिक्षा का ग्रहण कैसे हो? माता भगिनियों के जैसे बुरे भले आचरण होते हैं, वैसे ही सीख लेता है.इत्यादि कारणों से माता,बहन आदिक सब स्त्रियों को सत्शिक्षा की अति आवश्यकता समझ कर स्त्रियों में विद्या का प्रचार होने के लिये सरकार तथा बडे २ विद्वद्-

ण कन्यापाठशालायें स्थापन करना और स्त्रीपाठ्य पुस्तकों का प्रचार करना आदि अनेक उपाय करते हैं; जिन से क्रम क्रमकर स्त्रीशिक्षा का प्रचार हमारे देश की भी हरएक जाति में होने लगा। परन्तु हमारी जैनसमाज में स्त्रियों के पढने की बहुत कम चर्चा है. कोई २ विद्वान् अपनी बहन बेटियों को पढाते हैं तौ जैन ग्रंथों के सिवाय सांसारिक लाभदायक पुस्तक नहीं पढाते. क्यौंकि, स्त्रियों के पढने लायक छपी हुई यावत्पुस्तकें हैं उन में प्रायः जैनमत विरुद्ध कोई न कोई मत अवश्य मिश्रित होता है. इस कारण जैनमतावलंबिनी स्त्रियों के पढने योग्य कोई गृहस्थ धर्म की सिखानेवाली स्वतंत्र पुस्तक न होने के कारण हमारी प्रिय लघु भगिनी ने अनुरोध किया कि, " एक ऐसी पुस्तक लिखो कि जिस से हमारी समाज की स्त्रियें पढ कर अत्यन्त लाभ उठा सकें"। तब मैं ने शीलकथा भाषाटीका द्वारा सारे श्रावकधर्म को बताने की इच्छा से मनोरमा उपन्यास नाम का पुस्तक लिखना शुरु किया था। कुछ दिन बाद हमारे एक प्रियमित्र ने अत्यन्त परिश्रम करते देखा तौ कहने लगे कि तुम वृथा परिश्रम क्यौं करते हो ? क्यौंकि, प्रथम तौ हमारी समाज में स्त्री छोड पुरुषों में भी ऐसा विद्या का प्रचार नहीं जो इस का आदर करे, दूसरे यह एक जैनकथा है सो इस को छापकर प्रकाश करने में अनेक जैनी तुम से विरुद्ध हो जायंगे. इस कारण जैनियों के भरोसे किसी कार्य में परिश्रम करना ऐसा है जैसे कि कूप में गिरे हुए सिंह (सेर) का फलांग् मारकर निकलने का उपाय करना। सो मित्रवर ! यदि तुम को स्त्री-उपयोगी पुस्तक लिखने की उत्कंठा ही हो तौ सर्व साधारण समाज के उपयोगी पुस्तक लिखो जिस से सांसारिक पारमार्थिक दोनों काम सधें तब मैं ने अपने मन में पूर्वापर विचार करके देखा तौ मित्र का कहना ही उचि-

त समझा, और उसी समय मनोरमा उपन्यास को अधबीच में छोडकर कई मित्रगणों की सलाह से यह " नारीधर्मप्रकाश " [द्वितीय ग्रंथ] मनुस्मृति और महाभारत के श्लोकों का अवलंबन और बंगभाषा की एक पुस्तक का सहारा लेकर सरल हिन्दीभाषा में लिखा है । इस में जहां तक मुझ से हो सका है स्त्रियों के लाभदायक पतिव्रता धर्म की शिक्षा का उल्लेख किया है. और न किसी मत के खिलाफ कोई चर्चा लिखी है. इस कारण इस को हर एक मत की स्त्रियें पढकर असीम लाभ उठा सकती हैं. परन्तु जब स्त्रीसमाज में इस का आदरपूर्वक प्रचार हो जाय और हमारी भारतभगिनियों का कुछ भी उपकार सध जाय तो अपना परिश्रम सफल समझूं.

तारीख २७ जुलाई सन १८९३

भारतभगिनियों का हितैषी
पन्नालाल वा० दि० जैन.
मुरादाबाद.
[पश्चिमोत्तर]

पुस्तक मिलनेका ठिकाना
गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
"लक्ष्मीवेंकटेश्वर" छापाखाना.
कल्याण–(मुंबई)

॥ लक्ष्मीवेङ्कटेश्वराय नमः ॥

अथ

मनुस्मृति–महाभारत से उद्धृत

नारीधर्मप्रकाश.

दोहा—पंच परगुरु हृदय धरि, नाऊँ शीश कर जोर ।
लाखों भविजन तिर गये, लखि जिन तजि दुख घोर ॥

॥ श्लोकः ॥

बाल्या वा युवत्या वा वृद्धया वापि योषिता ॥
न स्वातन्त्र्येण कर्त्तव्यं किंचित्कार्यं गृहेष्वपि ॥ १॥

[मनु॰ अ॰ ५ श्लोक १४७]

दोहा—बाल युवति वृद्धा उमर, होय कौनहू वाम ॥
व्है स्वतंत्र निज गृह विषै, करै न कोऊ काम ॥ १॥

अर्थ—बालक, युवा, या वृद्धअवस्थावाली किसी स्त्री को भी अपने घर में अपनी इच्छा के अनुसार कोई काम नहीं करना चाहिये ॥ १ ॥

शिक्षा—स्त्रियों का अपने कुटुंबियों से सदा ही सम्बन्ध है. स्त्रियों का इस में ही हित है और इस में ही भला है कि वह अपने भाई, बंधु और कुटुंबियों की सलाह के विना कोई काम न करें. क्योंकि, संसार में अनेक प्रकार के लालच, अ-

नेक भांति के भय और तरह २ की विपदें आन पडती हैं. और स्त्रियें स्वभाव से ही दुर्बल (अबला) सीधी सादी होती हैं सो संसार की अनेक बातों को नहीं जानती हैं. इस लिये कुटुंबकबीले के लोग ही उन की रक्षा के करनेवाले होते हैं. यदि उन की सम्मति (सलाह) से स्त्रियें कार्य करें, तौ अचानक कोई विपद उन के ऊपर नहीं पड सकती. अपने कुटुंब के लोगों का उल्लंघन करने से और बुरे लोगों की बुरी सलाह में पड कर अनेक स्त्रियें बिगड गई हैं; जिस से सदा के लिये कलंक का टीका उन को लगाना पड़ा और पाप, ताप, दुःख और क्लेशों ने सर्वदा (हमेशा) के लिये उन के मन में घर बना लिया. शास्त्र की आज्ञा के विरुद्ध कार्य करने से उन्हों ने अपना यह लोक (जन्म) और परलोक दोनों बिगाडे. धर्म में दृढ (मजबूत) भाव न रखने से उन को आकुलता तथा और भी अनेक प्रकार की विपत्तियें झेलनी पडी हैं. और मृत्यु होने पर फिर उन को नरकों में अनेक प्रकार के महान् २ कष्ट सहने पडे हैं। इस लिये जो स्त्रियें बुद्धिमती होती हैं, वे कभी अपने बडे बूढों और भाई बन्धुओं का निरादर नहीं करती हैं. हां, यदि कोई अपने कुटुम्बियों में से धर्म के विरुद्ध किसी कार्य के करने को कहे तौ उस की ऐसी बात को कभी न मानना चाहिये; क्यौं कि धर्म सब से ही श्रेष्ठ होता है। इस लोक में धर्म की बराबर मनुष्य का रक्षक कोई भी नहीं है। जो स्त्रियें उत्तम विद्या और ज्ञानाभ्यास करके धर्म में अचल हो गई हैं उनके कुटुम्बी लोग यदि उन से अधिक विद्यावान् तथा धार्मिक न होवे तौ वे स्त्रियें अपनी इच्छानुसार भला बुरा विचार कर कोई कार्य स्वतंत्रता से कर लें, तौ उन को कोई दोष नहीं है.

बाल्ये पितुर्वशे तिष्ठेत् पाणिग्राहस्य यौवने ॥
पुत्राणां भर्तरि प्रेते न भजेत्स्त्री स्वतन्त्रताम् ॥ २॥

[मनुः ५। १४८]

दोहा—बालापन पितु के वशहि, पतिवश यौवनकाल ॥
ता पाछे पुत्रन निकट, रहें भली जो बाल ॥२॥

अर्थ—बालापन में पिता के वश, युवा अवस्था में पति के वश और पति की मृत्यु होने के पीछे स्त्रियों को अपने पुत्रों के वश रहना चाहिये. स्त्रियों को स्वतंत्र रहना कदापि उचित नहीं है ॥ २ ॥

शिक्षा—बालकपन में पिता की आज्ञा (हुकम) के अनुसार चलने ही से लडकियों का भला है; क्यौं कि पिता उमर में बडे, ज्ञान में बडे, मान में बडे और परम पूजनीय होते हैं. और पिता स्वभाव से ही अपनी सन्तान का हित चाहते हैं। इस लिये पिता की आज्ञा में रह कर लडकियों को विद्या, धर्म और अनेक प्रकार के शिल्पकर्म अर्थात् सीना, पिरोना, मोजा बुनना, गुलबंद बुनना इत्यादि सीखने चाहिये. लडकियों को चौदह (१४) वर्ष की उमर तक अपने विवाह की कुछ फिकर न करनी चाहिये और दूसरी लडकियों के साथ खेल में अपने विवाह की बात तथा परपुरुष की बात या किसी भांत्ति की खोटी बात कहनी उचित नहीं है. जो कोई दूसरी लडकी या स्त्री इस प्रकार की बात चीत करे तौ उस के धोरे (पास) बैठना तौ क्या ? खडा होना भी उचित नहीं; वरन उस से यह कहना चाहिये कि, तुम हम से ऐसी बात कभी मत कहा करो. यदि वह न माने तौ उस के पास से चला आना चाहिये. और

खोटी लडकियों के साथ खेल खेलना भी उचित नहीं। जिस बालक की उमर बारह वर्ष से अधिक हो तौ उस के साथ लडकियों को नहीं खेलना चाहिये परन्तु पिता माता या अपने किसी और कुटुंबी के निकट उस से भली बातचीत करने में कोई दोष नहीं। जिस बालक की उमर बारह वर्ष से कम है, और वह बुरी बातें और गाली इत्यादि देनी सिख गया हो उस के साथ भी लडकियों को खेलना उचित नहीं। और शरीर के जो अंग कपडे से ढके रहते हैं वे अंग किसी बालक या पुरुष को कभी छूने न दें क्यों कि छूने से शरीर और मन अपवित्र हो सकता है. यदि कोई पुरुष बल करके उन अंगों के छूने की इच्छा करे तौ उस के पास से माता पिता या और किसी कुटुंबी के निकट भाग जाना चाहिये। वरन वे सब बातें उस से कह देनी चाहिये। और फिर कभी ऐसे लडके लडकियों तथा आदमियों के पास न जांय। लडकियों को चाहिये कि किसी बालक या पुरुष को अपना मुख कभी न चूंबने दें क्यों कि इस से शरीर और मन दोनों अपवित्र हो जाते हैं। और किसी बुरे कार्य को लडकियें अपनी आंखों से न देखें तथा नंगे बालक (यदि उस की उमर पांच वर्ष से अधिक हो) या नंगे पुरुष को लडकियें कभी न देखें। और लडकियों को सत्य बोलने का अभ्यास करना चाहिये. सत्य बात कहने में यदि कोई कष्ट भी सहना पडे तो वह अच्छा है क्यों कि सत्य से पुण्य होता है. परन्तु झूंठी बात से चाहे लाभ भी होता हो तौ भी उस को न करना ही ठीक है. क्यों कि उस से पाप होता है। माता पिता से लडकियां कोई बात न छिपावें, कुछ पूछें तौ यदि वह बात कहने लायक हो तौ सत्य २ हाल ही कह देना चाहिये और यदि कहने लायक न हो तौ कभी कुछ न कहें, और उस से यह कहना चाहिये कि मैं नहीं कह सकती. परन्तु उस के पास

बनाकर झूंठी बात कभी न कहें. विद्या और धर्माचरण सीखने पर जब चौदह (१४) वर्ष की उमर हो जाय तौ लडकियें अपना वर पसंद करके नियत कर सकतीं हैं; परंतु विना माता-पिता की सलाह और आज्ञा के उस के साथ अपना विवाह नहीं कर सकतीं. क्यौं कि बुद्धि के पक जाने से माता पिता अपनी कन्या के लिये जैसा सुविचार कर सकते हैं; तैसा विचार कच्ची बुद्धिवाली लडकियां नहीं कर सकतीं. हां, जो माता पिता कन्या के विवाह में उस के सुख की तरफ दृष्टि छोड अपने मतलब की तरफ ही दृष्टि रख कर किसी ऐसे पुरुष के साथ उस का विवाह करने की इच्छा करें कि जिस में कन्या का निभाव न हो सके; तौ ऐसी अवस्था में वह (कन्या) पिता माता की आज्ञा का उल्लंघन करके कुमारी (बेव्याहके) रह जाय तौ कन्या का कुछ दोष नहीं। जब कन्या की उमर अठारह(१८) वर्ष से अधिक हो जाय तौ वह अपनी इच्छा के अनुसार विवाह कर सकती है.

विवाह हो जाने पर स्त्री अपने पति के कहने में चले; क्यौं कि पति की आज्ञा न मानने से आपस में प्रीति घट जाती है जब आपस में प्रीति नहीं तौ सुख कहां ? बहुधा (अकसर) ऐसा भी हो सकता है कि, मोह या भ्रम में पडकर स्त्री को किसी अहितकारी (बुरे) कार्य को करने की इच्छा हुई; और वह नहीं समझती कि यह काम बुरा है ऐसी अवस्था (हालत) में पति के विरुद्ध कार्य करने में हानि हो सकती है; परन्तु पति की आज्ञा में रहने से अधिक हानि नहीं हो सकती। दूसरे, ऐसी २ बातों में पति के साथ कपटरहित व्यवहार करना चाहिये। पति से कोई बात छिपाकर रखने या झूंठ बोलने से जब कभी वह झूंठ और छल प्रगट हो जायगा तौ उस स्त्री पर उस के पति का प्रेम घट जायगा, और मनों में अंतर आ जाय तौ कुछ आ-

श्रयें नहीं। दूसरे, जो किसी दोष की बात को छिपा भी लिया जाय; तौ भी उस से कदापि हानि मिटने की आशा नहीं हो सकती. वरन पति को जता देने से वह हानि दूर भी हो सकती है. क्यौं कि, खोटा कर्म कभी छिपा हुआ नहीं रह सकता. शीघ्र या विलंब से प्रकाशित हो ही जाता है. इस लिये स्त्रियों को सदा ही सावधान रहना चाहिये कि कभी भी उन से कोई अनुचित (बुरा) कार्य न हो जाय. और अज्ञानवश यदि कोई अपराध भी हो जाय तौ उस दोष को निष्कपटता के साथ स्वामी से कहकर क्षमा मांग लेनी उचित है; स्त्रियों को यह बात सदा ही मन में रखनी चाहिये कि साधारण बात हो चाहे भारी बात हो, दोषरहित हो वा दोषसहित हो, परन्तु पति के निकट उस को कभी न छिपावें; क्यौं कि इस से पति का उन पर जितना अनुराग (प्रेम) और विश्वास होगा उतना और किसी प्रकार से नहीं हो सकता. पति यदि अज्ञानी, धीरजरहित या क्रोधादि छः शत्रुओं के वश में हो तब एकाएक सब बात उस से न कहकर ऐसे समय में उस से कहना चाहिये कि जिस समय वह आनंदसहित हो और उस से इस प्रकार कहना चाहिये कि जिस से कोई अनर्थ (बुराई) की बात न निकले. परन्तु यह निश्चय जान लेना चाहिये कि, कपटरहित और सत्यव्यवहार से ही सदा मंगल होता है. जो पति किसी दूर देश में हो तौ चिठ्ठी (पत्री) के सहारे उस की आज्ञा और सम्मति लेकर उस के अनुसार कार्य करना चाहिये. परन्तु मनमाना कोई कार्य करना अच्छा नहीं; क्यौं कि दोजनों की बुद्धि से मिलकर जो कार्य होता है वह खराब मनुष्य की बुद्धि से किये हुए काम से कहीं बढ चढ होता है. अधिक करके संसार में स्त्री-पुरुष का इतना गाढा सम्बन्ध इस लिये ही होता है कि

एक दूसरी की सलाह और सहायता से सांसारिक और पारमार्थिक सब कार्यों का भले प्रकार निर्वाह किया करे.

पति की मृत्यु के पीछे यदि पुत्र समर्थ हों तौ उन के आधीन रहना उचित है. क्यौं कि स्त्रियों के लिये पुरुषों की सहायता सदा ही आवश्यक है. पति के पीछे पुत्र की समान रक्षा करनेवाला और कौन हो सकता है? पति के जीते हुए सलाह, सहायता, रक्षा और भरण-पोषण के लिये स्त्री जिस प्रकार उस (पति) पर भरोसा रखती है, वैसा ही भरोसा पति के पीछे पुत्र के ऊपर रखना योग्य है. जो माताएं अपने गुणवान् पुत्र का अनादर करके स्वतंत्रता से चलती हैं उन के ऊपर अनेक प्रकार के कष्ट और विपत्तियें आजाती हैं. यदि कोई पुत्र न हो तौ विधवा स्त्री को उचित है कि, भाई या किसी और कुटुंबी के अथवा पति जिस के पास सौंप गया हो उस की सहायता और रक्षा ग्रहण करे. क्यौं कि रक्षाहीन स्त्रियों पर सैंकडों आफतें आन पडती हैं.

पित्रा भर्त्रा सुतैर्वापि नेच्छेद्विरहमात्मनः ॥
एषां हि विरहेण स्त्री गर्ह्यौ कुर्य्यादुभे कुले ॥ ३ ॥

[मनुः ५ । १४९]

गीतिका—पितु स्वामी अथवा निजपुत्रन सों न वियोग चहाहीं ॥ नाश करे प्रतिकूल जो यासों तेहि दोऊ कुल हि लजाहीं ॥ ३ ॥

अर्थ—पिता, स्वामी और पुत्रों से अपने अलग होने की इच्छा न करें. जो स्त्री इन को छोडकर अलग रहती है, वह स्त्री दोनों कुलों (पतिकुल और पितृकुल) को लजाती है ॥ ३ ॥

शिक्षा–जो किसी कारण से पिता, स्वामी या पुत्रों के साथ विमनता हो जाय तौ स्त्री को उचित है कि, उस विरोध के दूर करने का यत्न करती रहें. और इन लोगों को छोड़-कर कभी जुदे रहने की इच्छा न करें क्यों कि, स्त्री के अलग और स्वतंत्रता से रहने पर लोग (दुनियां) उस के चरित्र पर सन्देह करने लग जाते हैं. चाहे वह अपने मन से अपने को कैसी ही सुचरित्रा क्यों न समझती हो. इस के सिवाय अलग रहने पर दुष्ट लोग उस को खोटी सलाह देने और बुरे कामों में लगाने के लिये तैयार हो जाते हैं. जब उस स्त्री के सुचरित्र पर संदेह हुआ तब केवल उस के ही माथे क-लंक नहीं लगता, वरन उस के पति और पिता के दोनों ही के कुल कलंकित और निंदित हो जाते हैं. इस लिये स्त्रियों को सदा सावधान रहना चाहिये कि, जिन कार्यों से इतनी हा-नि हो उन को कभी न करें.

सदा प्रहृष्टया भाव्यं गृहकार्य्येषु दक्षया ॥
सुसंस्कृतोपस्करया व्यये चामुक्तहस्तया ॥ ४ ॥
[मनुः ५ । १५०]

दोहा–नित ही हर्षित चित रहे, गृहकाज हि परवीन ॥
खर्च अल्प सामग्रि गृह, राखहिं नाहिं मलीन॥४॥

अर्थ–महाहर्षित चित्त रहें घर के कार्य्यों में चतुर होना चाहिये. और घर की सब चीज वस्तु साफ सुथरी रक्खें बहुत खर्च कभी न करें ॥ ४ ॥

शिक्षा–स्त्री को सदा ही हर्षित मन से रहना चाहिये. स्वामी यदि रूठ जाय, सास, जिठानी इत्यादि गुरुजन यदि क्रोध करें; पुत्र, नौकर, चाकर इत्यादि लघुजन यदि जी दु-

खावें; ननद, भावज, बहन इत्यादि हमझोलियें यदि दुःख दें तथापि भली स्त्रियां क्रोध नहीं करती हैं. धीरज, क्षमा, सन्तोष और शान्ति आदिक गुणों से उन का मुखकमल सदा प्रफुल्लित (खिला हुआ) रहता है. वे कभी अपनी बडाई नहीं मारतीं, किसी को कडुआ वचन नहीं कहतीं, न बहुत बोलती चालतीं हैं और न कभी झूंठ बात कहती हैं. वे नरमाई, सुशीलता और सरलतादि के अनमोल गहने पहर लक्ष्मी की समान स्वरूपवान् गृह कार्य कर गृह को उज्ज्वल और शोभायमान करती हैं। स्त्रियों को रांधना, पोना, लेना, देना और जिनस पत्र लेना तथा घर का हिसाब रखना, सन्तान का पालन पोषण करना और वैद्यक (हकीमी) के हितकारी कुछ लटके (दवाइयें बनाना) याद करना इत्यादि सब कर्मों में चतुर होना चाहिये. घर की स्वामिनी (मालिकनी) के आलस्य से घर की अनेक चीज वस्तु में गडबड होती है और स्थान भी मैला कुचेला रहता है. गृहस्वामिनी की दृष्टि न होने पर नौकर चाकर भी जैसा चाहिये वैसा कार्य नहीं करते. इस से परिवार को पीडा और धन का नाश होता है. और उस स्त्री के न मन में फुरती आती और न सुख तथा आनंद की वृद्धि होती है। इस लिये स्त्रियों को उचित है, कि घरद्वार आंगन इत्यादि सब स्थान साफ सुथरे रक्खें, चीज वस्तु को लगाय २ के रक्खा करें; एक २ चीज के रखने को उचित स्थान या काठ आदिक का भड्डा नियत कर, जो वस्तु जिस स्थान में रखनी उचित हो, उस को उसी जगह रक्खें. काठ, पीतल, ताम्बे आदि की वस्तुओं पर जिस से धूल न जमने पावे, इस लिये कपडे से दिनभर में उन सब को एक बार, या दो वार पुंछवा देना चाहिये और कपडे आदि यत्नसहित संदूक वा अलमारी में रखने उचित हैं. सब वासन भांडों को भली भांति धोय मांजकर उन को नियत जगह

पर रखवा देने चाहिये. मैले कपड़े के साथ उजला कपडा न मिलने दें. दास-दासी और नौकर-चाकरों को सदा साफ कपडे पहरने के लिये कहना उचित है. पशु, पक्षी, सवारी और पशुओं के रहने का स्थान भी साफ रहे इस बातका भी सदा ध्यान रखना चाहिये. यदि घर में कोई बगिया या फुलवाडी हो तो उस को भी कूडा करकट से सदा ही निर्मल रखना चाहिये. जो नोकर चाकर हों तब तो यह कार्य उन से कराये जाय नहीं तो अपने आप कन्या और वधू (वहू) वगैरह की सहायता से करने योग्य है.

स्त्रियें अपने आप पैसे को पैदा नहीं करतीं, इसी लिये वे पैसे की कदर को भी नहीं जानती हैं. वे अपने स्वामी आदि के कमाये धन को वृथा बरबाद करके फिर पीछे से क्लेश सहन करती हैं सो जिस प्रकार से भगिनीगण ! अनेक तरह के कष्ट न पाओ और धन भी बच जाय ऐसा उपाय सब को करना उचित है और कुपात्र को दान देना ठीक नहीं दया करने के योग्य दुःखियों को, धर्म के प्रचार करनेवाली को या पाठशाला, औषधालय, तथा अनाथालयों को अपनी शक्ति के अनुसार तथा योग्य दान देना चाहिये. जिस प्रकार कंजूसता एक दोष है वैसे ही वित्त से अधिक दान करना भी दोषों में गिना जाता है. एक ओर जिस प्रकार फिजूल खर्ची न करें दूसरी ओर वैसे ही किसी का पावना भी न रक्खें.

नास्ति स्त्रीणां पृथग्यज्ञो न व्रतं नाप्युपोषितम् ॥
पतिं शुश्रूषते येन तेन स्वर्गे महीयते ॥ ८ ॥

[मनुः ५ । १५५]

चौपाई—जो तिय पतिपद सेवा करहीं, तिन से पृथक

धरम नहिं चरहीं। सो नारी स्वर्गन में जावैं, शोभायुत अतिशय सुख पावैं ॥ ५ ॥

अर्थ–जिस स्त्री करके पतिशुश्रूषा की जाती हो वह स्वर्ग में पूजित होती है उस स्त्री को पति से अलग पूजा व्रत उपवास न करना चाहिये ॥ ५ ॥

शिक्षा–स्त्रियों को अपने स्वामियों के साथ ही सब धर्म कर्म करना चाहिये, उन को अपने पति के साथ हीं कुटुंबपूजा व जाति की पूजा करनी चाहिये. स्वामी को छोडकर उन्हें इकले को ही पूजा, व्रत, उपवासादि कुछ भी न करना चाहिये. क्यौं कि वह स्वामी की सहधर्मिणी है. इकले धर्म साधन करना अपना मतलब साधन के सिवाय कुछ भी नहीं है. सती स्त्रियें जिस प्रकार अपने आत्मा का कल्याण चाहती हैं. वैसे ही अपने स्वामी की आत्मा के कल्याण को मानतीं हैं. इस कारण वे अकेलीं धर्मसाधन कैसे कर सकती हैं. हां, यदि उन का स्वामी उन के साथ धर्मसाधन करने में न लगे तब स्त्रियों को अपने स्वामी के धर्म में अनुरागी करने के लिये तन-मन-धन-वचन से उपाय करने चाहियें. प्रतिदिन भगवान् की पूजा और निर्जन (एकान्त) प्रार्थना स्त्रियें स्वतंत्रता से निःसंदेह कर सकती हैं. और उन का मुख्य कर्तव्य है इन दोनों कार्यों को जो स्त्रियें करती हैं वे और कुछ करें या न करें, परन्तु स्वर्गवास तो उन को निश्चय करके ही प्राप्त होगा.

पति की सेवा तीन प्रकार से की जाती है; अर्थात् तन, मन और वचन से पति से दृढ वात्सल्य रखना यह तो मन से पति की पूजा करनी है. यदि परपुरुष की चिंता या इच्छा केवल मन में भी की जाय तो स्त्री का प्रेम पति की ओर दृढ नहीं रहता. इस लिये पतिव्रता स्त्रियों को सावधान रहना

चाहिये कि, पर पुरुष की चिंता जरा भी मन में न आने पावे उन को सदा ही पति के हित की चिंता करनी चाहिये. सत्य वचन, हितकारी, प्रिय वचन, और नम्र वचन कहना चाहिये, तथा कभी२स्वामी को प्रिय लगे तो ऐसी पुस्तकें पढना तथा शुभ संगीतादि से उन के चित्त को लुभाना, यही वचन से पति की सेवा है.

पति को शरीर से सुख पहुंचाना, उस को जिस कार्य की आवश्यकता हो उस को उठकर आप ही उसी समय करना. पति जबतक घर में या संग में रहे तबतक उस की इच्छा के विना उस को कहीं त्यागकर किसी काम को न जाना चाहिये. पति के विना दूसरे के संग में हंसी ठट्ठा कभी न करना; सदा ही पति की आज्ञा में रहना चाहिये प्राण जाय तो भी व्यभिचार न करना यही सब तन से पति की सेवा करनी है. इस प्रकार पति की सेवा करने से पहले २ कुछ क्लेश मालूम होता है, परन्तु उस को मुख्य कर्म जानकर इस का साधन करने ही से कुछ दिनों में ही यह सब कार्य सहजसे आ जायंगे और उन कार्य्यों से क्लेश के बदले आनंद प्राप्त होने लगेगा. क्यों कि इन कार्य्यों से पति का हित और प्रेम बढता है. शीलवती सती पतिव्रता स्त्री की तुल्य उत्तम वस्तु संसार में दूसरी नहीं है स्त्रियों के लिये शीलवती पतिव्रता होने की समान और कोई पुण्य नहीं है. इस से देवतागण उन के ऊपर प्रसन्न हो जाते हैं. जिस के ऊपर देवतागण प्रसन्न हैं भला उस को किस बात की कमी है. शीलवती पतिव्रता की सत्प्रार्थना देवतागण सदा पूरी करते हैं और पाप-ताप-महाविपदों से भी उस को बचाते हैं, शीलवती पतिव्रता स्त्री परलोक में जो आनंद और जो सन्मान पाती हैं उन का इस लघु लेखनी से वर्णन नहीं हो सकता.

पाणिग्राहस्य साध्वी स्त्री जीवतो वा मृतस्य वा ॥
पतिलोकमभीप्सन्ती नाचरेत् किंचिदप्रियम्॥ ६ ॥

[मनुः ५ । १५६]

चौपाई—जो पतिव्रता धर्मधुर धीरी, चाहहिं स्वामिलोक ते नारी। जीवित मृतक कबहु निज पिय के, करहिं न काम कौन अप्रियके ॥ ६ ॥

अर्थ—सती पतिव्रता स्त्रियें जो अपने पति के लोक में (स्वर्गमोक्ष में) जाने की इच्छा करती हैं उन का विवाहित स्वामी वर्तमान (जिन्दा) हो या मृतक हो गया हो परन्तु वह कभी उस का बुरा लगनेवाला काम नहीं करतीं ॥ ६ ॥

शिक्षा—स्त्रियें निर्मल प्रेम से ही पति के साथ पतिसंगत के सुख पाने के योग्य होती हैं. स्त्रियों को उचित है कि, जिस के साथ विवाह हुआ हो उस के जीते रहते हुए (चाहे पास हो या कहीं परदेश में हो) ऐसा कोई काम न करे जो उस को बुरा लगे क्यों कि इस प्रकार का अभ्यास करने ही से निर्मल प्रेम की शिक्षा होती है. पतिव्रता स्त्रियें सदा इस खोज में रहें कि पति को क्या अच्छा लगता है; बस, जो पति को अच्छा लगे वो ही करें; और जिस को पति न चाहे उस का त्याग करें; हाँ, जो पति किसी बुरे कार्य को अच्छा समझे और भले कार्य को बुरा समझे तो उस को राजी करने को प्रसन्नता के लिये अच्छा कार्य छोडकर बुरा कार्य कभी न करना चाहिये, जो ऐसा अवसर आ जाय तो पतिव्रता स्त्री को उचित है कि, यह पति का स्वाभाविक (आदत) रोग जानकर उस की खोटी मति बदलने के लिये सदा नरमाई के साथ जतन (यत्न) करती

रहे, जो अपने जतन से यह कार्य सिद्ध नहीं तो धर्म की सहायता चाहें, अर्थात् धर्मोपार्जन करें. जब स्वामी की खोटी इच्छा बदलकर भले काय्यों में मति हो जाय तब स्त्री को उस के प्यारे काम करने चाहिये.

पतिं हित्वापकृष्टं स्वमुत्कृष्टं या निषेवते।
निन्द्यैव सा भवेल्लोके परपूर्वेति चोच्यते ॥ ७ ॥

[मनुः ५ । १६३]

दोहा–अनभल निजपति त्यागकर, करैं श्रेष्ठ पति वाम ॥
सो निन्दित परपूर्वा, लहहिं जगत्में नाम ॥ ७ ॥

अर्थ–जो स्त्री अपने खोटे स्वामी को त्यागकर दूसरे श्रेष्ठ (पुरुष) की सेवा करती है वह इस लोक (दुनियां) में निंदा की जाती; और लोगों से परपूर्वा नाम पाती है ॥ ७ ॥

शिक्षा–जो कर्मयोग से विवाहित स्वामी में कोई दोष हो तो भी उस को छोडना न चाहिये स्त्रियों को उचित है कि उस का दोष छुटाने की कोशिश करें; यदि वह अच्छा न हो सके तो उस में जो थोडे बहुत गुण हों उन को ही लेकर संतोष करें; ऐसा न करके स्त्री यदि अपने पति को छोडकर किसी दूसरे पति का आश्रय (आसरा) ले तो जगत् में उस की निंदा होती है; और सब जन ही उस को कुलटा कहते हैं ऐसे पापों को करने पर उस स्त्री की आत्मा से संतोष जाता रहता है. और इस दूसरे स्वामी से भी उस की तृप्ति नहीं होती और जिस ने अपने धर्मपति को त्याग दिया वैसे ही दूसरे पुरुष को भी वह छोड सकती है. इस के पीछे जो विपद् उस के ऊपर पडती है उस का वर्णन क्या करें? अनेक बुद्धिहीन स्त्रियों का इस प्रकार से सत्यानाश हो गया.

व्यभिचारात्तु भर्तुः स्त्री लोके प्राप्नोति निन्द्यताम् ॥
शृगालयोनिं प्राप्नोति पापरोगैश्च पीड्यते ॥ ८ ॥

[मनुः ५ । १६४]

दोहा-कर कर छल निज स्वामि सौं, करहिं पाप व्यभिचार ।
धर परलोक शृगालिवपु, दुख भोगहि ते नार ॥ ८ ॥

अर्थ-स्वामी को धोका देकर व्यभिचार करने से स्त्रियें इस लोक में निंदिता होकर अनेक प्रकार के रोग से उत्पन्न भई पीडायें तथा विपदें भोग करके परलोक में गीदडी की योनि पाती हैं ॥ ८ ॥

शिक्षा-जो स्त्री अपने स्वामी को त्यागन करके छिप २ कर छिनाला करती है. वह भी लोक में अतिशय निंदा को पाती है; क्यों कि छिनालपन का दोष छिपा नहीं रहता किसी न किसी समय प्रगट हो ही जाता है; और अधिक करके इस बुरे काम को करने से उपदंश (गर्मी) आतशक इत्यादि अनेक प्रकार के पापरोग शरीर में उत्पन्न होकर ऐसा दुःख देते हैं कि सारी पृथ्वी पर उन की बराबर दूसरा और कष्ट नहीं है. उपदंश रोग यदि एकवार अच्छा भी हो जाय तौ भी उस से कुकर्म्म करनेवाली स्त्रियों के शरीर का खून बिगडकर शरीर में अनेक भांति के रोग सारी उमर तक उपजाया करता है; सो इस लोक में कलंक, पति-स्त्री के सुख का नाश; पवित्र प्रेम का विलाय जाना, मन का संताप और शरीर को पीडा पहुँचने का कारण है बुरी स्त्रियों के साथ जो पुरुष संग करते हैं उन को भी इसी प्रकार का फल भोगना पडता है. जब कुकर्म करने से खून में बुराई आ जाती है, तब बहुधा सन्तान होने की आशा भी जाती रहती है इसी कारण से वेश्याओं के अकसर सन्तान

नहीं होती; और जो सन्तान हुई भी तो माता-पिता के दोष से उन का खून भी बिगडकर वह भी ऊपर कहे रोगों से कष्ट पाती है; इस प्रकार से कुकर्म का फल केवल अपने आप ही को नहीं भोगना पडता. वरन इस से अनेक वंशों का सत्यानाश हो जाता है; पीढ़ियों से चला आता हुआ वह रोग आगे की औलाद को बराबर लगता है। इस लोक में इन बुरे फलों के सिवाय परलोक में आत्मा को पापमय होने के कारण नरक का कष्ट भोगना पडता है; जैसे अंधियारे में गीदड पृथ्वी पर घूमते हुए रात में भयंकर शब्द से चिल्लाया करते हैं वैसे ही कुकर्म करनेवाली स्त्रियें भी परलोक में जाकर अपने पापों का फल-भोग करती हुई दुख-दर्द के मारे चिल्लाया करती हैं। थोडी देरतक शरीर को सुख देने के लिये जो स्त्री इतना बडा बुरा करनेवाला फल बटोरती है, उस की बराबर मूर्ख कोई पशु भी तो पृथ्वी पर नहीं होगा.

पतिं या नाभिचरति मनोवाग्देहसंयता ॥
सा भर्तृलोकमाप्नोति सद्भिः साध्वीति चोच्यते॥९॥

[मनुः ५ । १६५]

सोरठा-पति के प्रति व्यभिचार, करहि न मनतन जीतकर।
स्वामिलोक वहि नार,पावहि साध्वी बुध कहैं॥९॥

अर्थ—जो स्त्री अपने मन, वचन और शरीर को वश में रखकर पति के प्रति व्यभिचार नहीं करती है वह पतिलोक को प्राप्त होती है; और बुद्धिमान लोग उसे साध्वी कहते हैं ॥ ९ ॥

शिक्षा—मन वचन और शरीर को वश में रखना सब ही स्त्रियों को मुनासिब है। खोटी चिंता पाप, विचार, बे समय का-

मातुर होना इत्यादि बातें जिस से मन में न आवें ऐसा उपाय स्त्रियों को जरूर ही करना चाहिये, ऊपर कही हुई बातों में से यदि जरा भी कोई बात मन में आवे, उसी समय उस को जड-मूल से उखाड करके फेंक देना उचित है; जब पाप मन में जगह नहीं पावेगा तो शरीर में किस प्रकार रह सकता है. यदि मन में काम वगैरह छः शत्रुओं को टिका लिया जाय तो वह पाप शीघ्र ही आदमी को जीत लेता है. पाप पहले ही चिंता में उत्पन्न होता है फिर वचन में और इस के पीछे कार्य में आ जाता है; इस लिये पाप की जड जो पाप की चिंता है. उस को ही जीत लिया जाय तो वह अपाप आदमी के ऊपर अपनी ठकुराई नहीं जताय सकता. बहुतसी स्त्रियें यह विचार किया करती हैं कि मन में कुछ पाप की चिंता करने से क्या हर्ज होता है; पर वे यह नहीं जानतीं कि पाप की चिंता करना और घर में सांप को पालना बराबर है जैसे सांप मोका पाते ही काट खाता है वैसे ही पाप मनुष्य को बेखबर पाते ही कुकर्म्म में लगा देता है. पापचिंता के जीतने का यही ठीक उपाय है कि हरवक्त किसी न किसी काम में लगे रहना चाहिये. घर का कामकाज लिखना पढना पढी हुई दूसरी स्त्रियों से भली चरचा करना तथा धर्म की कथा बात-चीत करना आदि में ध्यान रहने से मन को पाप के विचार करने का अवसर नहीं मिलेगा. खाली बैठे रहने से, पापचिंता चोर की तरह अकसर मन में प्रवेश करेगी; आराम के लिये या किसी और कारण से जो कुछ देर खाली भी बैठना पडे तो उस समय भी किसी भली बात की चिंता करें. या भगवान् का नाम जप करने और उस का ध्यान धरने से मन अपने वश में रहता है. वचन के जीतने का यह उपाय है कि बुरी बातें हंसी में भी (कुअवसर) मुहं से न निकालें; स्त्रियें आपस में हंसी

दिल्लगी गान और किसी २ खोटी रीति में पडकर अकसर बुरी और निर्लज्जताई की बातें मुख से निकाला करती हैं; जमाई या बहनोई के घर आने पर उन के साथ हंसी, दिल्लगी, चुहल, ठट्ठा, या निर्लज्जता की बातें करने में बहुत दोष नहीं गिनतीं. इस के सिवाय विवाह वगैरह रीति में बुरी २ गालियें स्त्रियें गाया करती हैं यह आदत सब से बडी खराब और मन में पापचिंता को उपजानेवाली है; वरन कभी २ इन रीतियों से बडा नुकसान होता है. इस लिये इन सब कुरीतियों का त्याग करना बहुत ही जरूरी है. बुरी बातों का व्यवहार करना जिस प्रकार बुरा है, बहलाना और वृथा बोलना भी वैसा ही खराब है; बहुत सी स्त्रियों को अभ्यास (आदत) पड जाता है कि वे अपने पास बैठी हुई सहेली से बड २ करे ही जाती हैं. बहुतसी निरर्थक कहानियें, इस घर उस घर की बातें, कौन स्त्री कैसी है ? कौन पुरुष कैसा है ? इन सब के दोष गुण बखान किया करती हैं बहुत बहुत खूब सूरती ही को अच्छा समझती हैं; परन्तु अनेक सुन्दर स्त्रियों के चरित्र (आचरण) ऐसे बुरे हैं कि उन से मन में बुरे विचार ही उत्पन्न होते हैं; इन सब बुरे अभ्यासों से मन बिगडता है इस लिये इन सब को छोड देना और वचन को जीतने की विधि शास्त्र में कही गई है. जैसे ऊंचे शब्द से हँसना या बात कहते हुए हँसना स्त्रियों के लिये अच्छा नहीं. क्यों कि इस से मन का ओछापन प्रगट होता है. लोग जिस के मन को ओछा देखते हैं उस को अपने किसी मतलब के लिये निज वश में लाने का यत्न करते हैं; और शीघ्र ही उस को वश में कर लेते हैं. पति या सासू वगैरह बडे बूढे के पास न होने पर परपुरुष के साथ कथा वार्ता या अकेले में बात चीत करना उस के निकट बैठना यह सब काम ठीक नहीं क्यों कि ऐसे का-

मों के करने से पराये पुरुष के साथ मित्रता हो जाती है, और दूसरे पुरुष में कोई ऐसा गुण हो जो कि अपने पति न हो तौ स्त्रियों का मन अपने स्वामी की ओर से फिर जाता है. इस प्रकार होते २ उन स्त्रियों की बडी हानी होती है और चतुर लोग उन को वश में कर डालते हैं. इस लिये पतिव्रता स्त्रियों को उचित है कि पति या अपने घर के लोगों के पीछे किसी परपुरुष के साथ [चाहे वह धोरेके रिस्ते या कुटुम्ब के भी क्यौं न हो] बातचीत हरगिज न करें. हाँ, जो कोई किसी आवश्यकीय (जरूरी) बात को पूछनी हो तौ नजर नीचे रखकर दो-एक बातों का जवाब देने में कुछ दोष नहीं, वरन ऐसा होना तौ उचित ही है. स्वामी या गुरुजनों के सामने *स्त्रियों को चाहिये कि, पराये पुरुष के साथ बातचीत करने में* नजर (दृष्टि) नीची रक्खे; तथा और समय भी किसी पुरुष के साथ आमना सामना हो जाने पर उसी समय दृष्टि नीची कर लेनी चाहिये; जब दो जनों की निगाह एक दूसरे पर पडती है तौ उस को "चार आंखें" कहते हैं; किसी पुरुष की ओर देखकर स्त्रियां कभी न हँसे. अपने नौकर या किसी दूसरे के साथ निरर्थक कोई बात न करें; बस इन सब नियमों के पालने से वचन जीत लिया जाता है.

इस समय इस देश में अज्ञानता से अनेक कुरीतियें फैल गई हैं; जो कि पहिले समय में नहीं थीं जैसे गुरुजनों के पास रहने से स्त्रियें घूंगट काढकर किसी से बात भी नहीं करतीं; परन्तु उन के पीछे जाति पडोस के युवाओं (जवानों) और नौकर-चाकरों के साथ घूंगट खोल आनंद से कथा वार्ता और कहानियां कहा करती हैं. सो कैसा विरुद्ध कार्य है? गुरुजनों के पास रहते परपुरुष के साथ वार्तालाप करने में इतना दोष नहीं हो सकता; जितना कि उन के

पीछे हो सकता है इस लिये इस चाल को छोडकर जो कुछ किसी से कहना हो वह अपने गुरुजनों के सामने सामने कहना उचित है, पीछे कभी भी न कहा करें. दूसरे आजकल स्त्रियों को बदचलन करनेवाला प्रधान कारण खोरिया चला है जो कि विवाह में वरात गये बाद बेटेवाले के घर पर बिरादरी सब स्त्रियों को तथा नायन, दर्जेन, धोवन, धीमरी आदि बदचलन औरतों को बुलाकर नृत्यगान करवाया जाता है, जिस में उन बदमास नीच जाति की औरतों के साथ बडे २ घरों की औरतें निर्लज्जता के गीत गाने और नांचने लग जाती हैं. जो कोई सुशीला इस काम से अलग रहना चाहती हैं तो उस को भी जबरन अपने सामिल करके गाना इत्यादि करवाती हैं. उस समय अपने अंग उपांग ढके रहने की कोई जरुरतही नहीं रहती; क्योंकि पुरुष का वहां प्रवेश नहीं है, परन्तु व्यभिचारी बदमास लोग तो भी स्त्रियों का वेश बना २ कर छल कपट से बडे २ घरों की बहू बेटियों को देख आते हैं. उस समय सांगोपांग स्वच्छंद देखने से उन के मन में किसी न किसी पतिव्रता नवोढा पर बुरी दृष्टि हो जाती है. फिर उस को सैंकडो उपायों से धन मान इज्जत खोकर प्राप्त करके अपना कार्य सफल करता है; इस के सिवाय उन नीच जाति की स्त्रियों के साथ निःशंक बेशरम होकर नृत्य-गान करने से तथा देखने सुनने से कैसी ही पतिव्रता शीलवती क्यों न हो उसके मन में पापकार्य करने की तथा नांचने गाने की लालसा बढही जाती है; इस कारण यह रीति अत्यन्त ही हानिकारक है; परन्तु आश्चर्य यह है कि, यह रीति यहांतक प्रचार हो गई है कि इस से कोई देश वा कोई जाति नहीं बची. नहीं मालूम यह रीति किस दुष्टात्मा ने चला दी है. जो कि शास्त्र के और अकल के बिलकुल खिलाफ (विरुद्ध) है. जो स्त्री इस खोरिये को देखने जाती है उस को कोई भी

अकलमंद (पंडित) पतिव्रता नहीं कह सकते. क्यौं कि जो प-तिव्रता और नेक चलन होगी, वह कभी ऐसी जगह नहीं जा-यगी. जो इस में जाती हैं उन सब को प्रायः बदचलन ही स-मझना चाहिये. क्यौं कि चक्की में गया हुआ दाना विना चोट खाये सावत नहीं निकलता. इस कारण हम वारंवार अपनी सुशीला भगिनीगणों से प्रार्थना करते हैं कि, जो तुम अपने को नेक चलन और सुखी चाहती हो तौ इस खोरिये का देखना स्वप्न में भी मत विचारो.

शरीर को वश में रखने के अनेक नियम हैं; उन में से बडे २ यह नियम हैं,—स्त्रियों को सदा ही हंस की चाल के समान धीरे २ चलना चाहिये, डर या किसी बहुत जरुरत के सिवाय दौडना उचित नहीं है; अनेक स्त्रियें परपुरुष को सामने आ जाते ही घर में दौडकर जाती हैं जिस से अंग उपांगादि प्रायः दीख जाते हैं. सो यह बात ठीक नहीं; दौडना तौ तब चाहिये कि जब वह पुरुष कुछ अपने साथ धिटाई करना चाहे, नहीं तौ उस की तरफ विना देखे नीची दृष्टि किये सीधे स्व-भाव की चाल से चले जाना मुनासिब है. यदि उस समय वह कुछ पूंछे तो उस की दो-एक बातों का ठीक२उत्तर देती हुई घर में चली जाना ठीक है; गुरुजनों के सामने ऊंची दृष्टि न करके सदाही घूंगट काढना उचित है; और मार्ग में इतना घूंगट रखना चाहिये कि जिस से मार्ग भलीभांति दृष्टि आता रहे. महीन कपडा (जिस में अंग दीखे) पहरना उचित नहीं है. मुख का कुछ हिस्सा और हाथों के सिवाय घर के बाहर सब अंगों को भलीभांति ढककर चलना चाहिये. कलाबत्तू या बहुत टीपटाप का कपडा स्त्रियों को सब के सामने नहीं पहरना चाहिये. मा-रवाड देश में सब स्त्रियें घर के बाहर भी खुले बाजार में रंगीन गोटे किनारी के वेश कीमती कपडे और और वि-

छुओं की झनकारसहित फिरती रहती हैं, सो, यह रिवाज बहुत बुरी है. हमारी समझ में तो पश्चिमोत्तर देश की चाल बहुत अच्छी मालूम होती है. उस देश में जब स्त्रियें बाहर निकलती हैं तौ रंगीन कपड़ों पर सफेद चद्दर ओढकर निकलती हैं हमारे इस देश में सब स्त्रियों के पांव खुले रहते हैं; हाथ तौ खुले रहें, परन्तु पांवों के खु े रहने की क्या आवश्यकता है ? बहुतसे पुरुष घूंगट काडी हुई स्त्रियों के पांव देखकर ही उन के रूप की जांच किया करते हैं; इस के सिवाय खुले पांव रहना कुछ बदतमीजी का भी लक्षण है. परन्तु आजकल तौ ऐसी रीति चली है कि रंडियों (वेश्याओं) में भी नहीं देखी जाती. याने झनकारदार विछुये तथा छड़े पहरकर बाजारों में नंगे पांव जान बूझकर जोर २ से पांव रखती चला करती हैं. जिस के विछुओं की झनकार सुनने से कैसाही वृद्ध बैरागी तथा कार्य में मग्न क्यौं न हो ! एकवार तौ उस का मन और आंखें उस की तरफ जरूर हो चल जायगी; नहीं मालूम यह सत्यानाशी रिवाज कैसे चल पड़ा; यह रिवाज गृहस्थ स्त्रियों के लिये बड़ा हानिकारक है. क्यौं कि, यह रिवाज वेश्याओं (रंडियों) का है. वेहीं ऐसे २ गहने पहनकर मनुष्यों का मन खैंचने को झनझनाट करती हुई बाजार में चला करती हैं. पतिव्रता गृहस्थ स्त्रियों को विछुये पहरकर क्या बाजार के मनुष्यों को मोहित करना है ? हां, अगर घर में पहर लें तो कुछ विशेष हर्ज नहीं. मगर घर के बाहर विछुये पहरने का रिवाज बिलकुल त्याग देना चाहिये. परन्तु घर में भी जेठ ससुर के सामने ऐसे तौर से पांव रक्खें कि उन को मालूम ही न हो कि इधर से वहु जा रही है और बाजार में जूते या मोजे से पैरों को ढका रखना उचित है. अधिक गहना पहरने से तथा दिनभर गहना पहरे रहने से कुछ स्त्रियों की शोभा नहीं बढती. पोंचा, गला, कान इत्यादि में थोड़ासा

गहना पहर लेना ही ठीक है. क्यौं कि स्त्रियों का मुख्य गहना शील है; इसी से विना गहने की जगत् में साध्वी कहलाती हैं और परम शोभा को पाती हैं.

जो किसी के यहां अपनी मझोलियों के साथ जाना हो तौ अपने हित के लिये किसी बड़ी बूढ़ी को साथ ले जाना उचित है. अपनी नोकर चाकरनियें तथा धींवरियें अपनी रक्षा करनेवाली नहीं हो सकतीं. माता, सास, जाति, कुटम्ब की तथा और कोई बड़ी बूढ़ी अपनी सास की कोई भनेली यही उत्तम हित की चाहनेवाली हो सकती हैं. नहाना, तेल मलना, बाल काढ़ना, माथा बंधवाना, कपड़े पहरना इत्यादि ऐसे स्थान में करना चाहिये कि जहां किसी परपुरुष की दृष्टि अपने ऊपर न पड़े. जब स्त्रियां रसोई बनावें तब उन को सब के भोजन कर. लेने के पीछे से आहार करना चाहिये. बड़े बूढों को हाथ जोड़ शिर झुकाय कर प्रणाम करना चाहिये, पति के बंधु-बांधवों और बराबर वालों को हाथ जोड़ शिर झुकाय नमस्कार करें. अपने से छोटा जो कोई नमस्कार या प्रणाम करे तौ उस को आशीर्वाद दें. अथवा थोडासा शिर झुकाय दें. हाथपांवों की चंचलता वरन सब ही प्रकार से शरीर की चंचलता छोड देनी चाहिये. दूसरे के सामने जंभाई न लें. जहां पर पति के सिवाय कोई दूसरा पुरुष आ जाय तौ उस स्थान पर लेटना उचित नहीं परन्तु जो पति अपने निकट हो तौ कुछ डर भी नहीं है. स्त्रियें परपुरुष के शरीर को कभी न छुवें और उन के निकट न खडी हों, न बैठें. हां, जो परपुरुष, से कोई चीजवस्तु लेनी हो तौ उस का हाथ विना छुये उस से वह चीज ले सकती हैं; अपने धोरे जो कोई बडी बूढी होय तौ परपुरुष के साथ एक घर में रहना उचित नहीं.

स्त्रियों को चाहिये कि, प्रातःकाल ही अर्थात् सूरज निकल-

ने से पहले ही चरपाई (पलंग) में से उठकर परमेश्वर को स्मरणपूर्वक हाथ मुंह धो घर की सामग्री को साफ करावें; बालबच्चों के खाने पीने की खबर ले. नोकर-चाकरों के रहने से गृहकार्य में जो शरीर से परिश्रम न लिया जाय तौ शरीर की फुरती के लिये कुछ देर टहलनाही उचित है. फिर स्नानादि करके कुछ देरतक भगवान् के नाम याद करना. वा धर्मशास्त्र की स्वाध्याय करना चाहिये, फिर रसोई का बन्दोबस्त ठीक होना चाहिये. जो घर में रसोई करने पर कोई नोकर हो तौ उस को उस के कार्य में लगायकर, फिर धर्मशास्त्र को विचारना चाहिये, या शिल्पादिक की पुस्तकें पढे, या अपने बालकों को तथा बिरादरी के लडके या लडकियों को लिखना, पढना सिखावें. जब सब कुटुम्ब भोजन कर चुके तौ स्त्रियों को लिखने-पढने वा सीने-पिरोने के कार्य में लगना चाहिये; तथा और दूसरे जरुरी कार्य भी उसी समय कर लेने योग्य हैं. संध्या के समय फिर घर को बुहार झाडकर रसोई बनाने की तैयारी करना उचित है; उस प्रकार स्त्रियें नित्य के करने योग्य कार्यों का बन्धान (नियम) से किया करें. इस से उन का शरीर वश में रहेगा; इन सब बातों का पालन करना पहले २ तौ कुछ कठिन मालुम पडता है; परन्तु थोडेही दिनों में जब धीरे २ अभ्यास हो जाता है; तब इन कामों में जरा भी क्लेश नहीं मालूम होगा.

जो स्त्रियें पहले कहे हुए तीन प्रकार के कार्यों का अभ्यास किया करती हैं उन की पतिसेवा सरलता से होजाती है. परन्तु पतिसेवा के सब से बडे इस लक्षण की मन में याद रखना चाहिये कि भोजन, विहार, आनंद, ज्ञान, धर्म आदि किसी बात में भी पति से छल कपट न किया जाय, अर्थात् कोई सुख पति को त्यागकर भोगना न चाहिये. जब स्वामी रोग, शोक

अथवा किसी विपद् में आन पड़ें तब वितसमान मिहनत या जैसे हो सके उस की सहायता करनी चाहिये; जिस से पति का शोक दूर हो ऐसे उपाय स्त्रियों को तन-मन से करना चाहिये जो सती लक्ष्मी स्त्रियें इस प्रकार के धर्मकार्य करती हैं, वे परलोक में अपने स्वामी के साथ सुख भोगती हैं, सब ही साध्वी और धर्मात्मा कहकर उन की प्रशंसा करते हैं. वे स्त्रियें धन्य हैं कि जिन से कुल भी धन्य हो जाता है. उस का वर्ताव देखकर उन की आल ओलाद व समस्त परिवार भी धर्मात्मा और सुखी होता है.

इति प्रथमभाग समाप्त।

अथ

द्वितीयभागप्रारम्भ।

महाभारत से उद्धृत.

सा भार्या या गृहे दक्षा सा भार्य्या या प्रजावती॥
सा भार्या या पतिप्राणा सा भार्या या पतिव्रता॥१॥

[महाभारत आदिपर्व अ०७४। श्लो०४०]

चौपाई—ग्रहकारज मैं निपुण कहावै, प्रजावती हो कुलहि बढावै। पति सों नेह करै दिन राती, वह पतिव्रता वधू कहलाती॥१॥

अर्थ—जो घर के काम में चतुर, सन्तानवती, पति

की प्यारी, और पतिव्रता हो वही ठीक भार्या है॥१॥

शिक्षा—आलस्य सब बुराइयों की जड है जो स्त्रियां आलस्य के मारे घर के कामकाज नहीं करतीं या समय को वृथा खोती हैं, उन को शरीर वस न रखने के कारण हैं. अनेक प्रकार के कष्ट व नुकसान उठाने पडते हैं, जो स्त्रियें आलस्य के वश हो विद्या और ज्ञानबुद्धि के लिये यत्न नहीं करतीं और धर्मकार्य्यों से विमुख हैं, उन के मन को कभी सुख संतोष नहीं मिलता. इस लिये आलस्य छोड सब घर के कामकाज और विद्या सीखने का अभ्यास करना ठीक है. कि जिस से सब कार्य्यों में चतुरता आजाती है. विद्याहीन मूर्ख स्त्रियें घर के कामकाज में होसियार नहीं हो सकतीं. और जो विद्या पढकर भी गृहकार्य में मन नहीं लगातीं उन की विद्या किसी काम की नहीं अर्थात् उस का पढना वृथा है; और जो स्त्रियें विद्या पढकर घर के कामकाज में होसियार हो जाती हैं वेही ठीक स्त्री हैं; शरीर को वश में रखने और इस के नियम पालने से उत्तम सन्तान जन्मती है; नियम के साथ शरीर को सुखी रखनेवाले पदार्थों का भोजन करना, शरीर से परिश्रम (महनत) करना, अच्छी हवा का सेवन करना, काम के वश में रखना इन सब बातों के पालने से शरीर के नियमों की रक्षा हो जाती है, दूसरे ऐसा करने से सन्तान भी उत्तम उत्पन्न होती है. क्यौं कि, भार्या (बहू) वही है जो श्रेष्ठ सन्तानवाली है जो विधि विधान से सन्तान को पालती पोषती और लिखना पढना सिखाती है वही भार्या कहलाती है.

जिन का सारा सुख स्वामी सेही है जो स्वामी के सिवाय और किसी को मन नहीं देतीं, विना प्राण के जैसे शरीर नहीं बचता वैसे ही स्वामी के विना जो और किसी प्रकार से सुखी नहीं होती, जिन को स्वामी प्राण से भी अधिक प्यारे होते हैं,

वेही पतियों को प्यारी (पतिप्राण) होती हैं और जो पति की प्या-
री होती हैं वही यथार्थ में भार्या है.

पति की सेवा करनाही जिन का व्रत, कैसे पति के शरीर को सुख होगा ऐसी चिंता मन में करके जो पति के तनमन को सुख पहुँचाने का यत्न करती हैं, और पति के साथ प्रेम बढाने का उपाय जो सदा किया करती हैं. पति के क्रोध से पति के निरादर से और पति की अप्रसन्नता से जो मन मलीन न करके जो अपने पति के दोष छुटाने की कोशिश (चेष्टा) नरमाई के साथ किया करती हैं; क्षमा, धीरज और ज्ञान का असरा लिये हुए पति के दोष से भी जिन का मन चलबिचल नहीं होता, पति में हजार दोष रहने पर भी जो पति भक्ति से मुँह (मुख) नहीं मोडती, जिस से पति के सब दोष दूर हों, उन का हित हो; भले विचार और नरमाई के साथ जो सदा इस यत्न में रहती हैं; जबतक काम पूरा न हो तबतक वि-ना हिम्मत हारे जो यत्न किया करती हैं, पति के हित के लिये सब प्रकार के क्लेश जो सहलिया करती हैं वेही पतिव्रता स्त्री हैं. कोई २ कह सकतीं हैं कि, हम पति के लिये क्यों क्लेश सहें ? इस से लाभ क्या ? उन को समझना चाहिये कि पति के सिवाय स्त्री की और गति नहीं; अधिक करके स्त्री के परलोक और इस लोक के सुख का भरोसा एक स्वामीही परहै परलोक के सुख के लिये पहले के आदमी कितने २ दिनों तक उद्धर तप किया करते थे. पति के लिये जो अपना जीव तक दे सकती हैं, वे परम तपस्विनी हैं उन की तपस्या का फल इतना अधिक होता है; उन की गिनती नहीं हो सकती. कोई समस्त पृथ्वी का राज्य पायकर भी उतना नहीं पा सकता; जितना एक सती पतिव्रता स्त्री अपने प्राण पति की सेवा में लगाय कर सुख पा-ती हैं, परन्तु पतिव्रता स्त्रियें फल की चाहना नहीं रखती हैं

हमने बहुत सारे उपन्यासों में सुना है कि कितनी ही पति की प्यारी स्त्रियों ने घर-द्वार छोड सब सुख त्याग देश २ में घूमकर विपद् में घिरे हुए परदेशी पति को विपद् से बचाया है. उन के यत्न और वीरता के सामने बड़े २ वीर लोगों ने भी हार मानी है; तथा बड़े २ बली लोगों का गर्व चूर्ण हो गया है; रावण तीन खड को जीतकर बड़े २ देवताओं को वश में ले आया, परन्तु एक सती स्त्री (सीता) को वश में न ला सका, देखो! सती का धर्मबल कितना बड़ा है. दमयंती (राजा नल की रानी) कितनी विपद् में पड़ी और स्वामी से भयंकर वन में निर्दयता से त्यागी भी गई तो भी उस ने अपने स्वामी से भक्ति नहीं घटाई, और कितने यत्न करके स्वामी को विपद् से छुड़ाय फिर उस की संगिनी हुई. सावित्री ने मरे हुए पति को भी नहीं छोड़ा, पतिव्रता स्त्रियों के सत्य में बड़े २ तपस्वियों ने हार मानी है. केवल पतिव्रता धर्म का पालन करके स्त्रियें अपने धर्म का बल अतुलनीय बढ़ा सकती हैं इस लिये पतिव्रता स्त्रियें ही यथार्थ भार्या है.

एतद्धि परमं नार्याः कार्यं लोके सनातनम् ॥
प्राणानपि परित्यज्य यद्भर्तुर्हितमाचरेत् ॥२॥

[आदिपर्व १५८।३]

सोरठा—यही सनातन धर्म, नारिन को या लोक में ॥
पतिहितसाधन कर्म, प्राण जांय तौहू करैं ॥२॥

अर्थ—इस लोक में स्त्रियों का सनातन धर्म यही है कि प्राणत्याग करके भी यदि स्वामी का कोई हित होना तौ उस को करें ॥ २ ॥

शिक्षा—इस संसार में सदा कोई भी नहीं रहेगा. देखते २ दिन,

महिने, वर्ष बीते जाते हैं उस दिन हमारा बालकपन था, आज जवानी आई है, कुछ दिन में बूढे हो जायगे फिर मौत आने में क्या देरी है ? फिर यह भी तो कोई नहीं जानता कि बुढापे तक बचेंगे या नहीं ? कौन जानता है कि कल ही किसी रोग से सताये जाकर दो एक दिन में ही प्राण देने पडें. किस को खबर है कि मौत कब आकर हमें ले जायगी. इस जिन्दगी का क्या ठिकाना है ? वरन इसी भांति संसार के किसी सुख का भी भरोसा नहीं. कल के उत्तम २ सुखभोगकिये हुए आज कहां हैं ? स्वप्न के समान भोगे हुए सबही सुख बीत गये, और जो कुछ भोगेंगे वे सब भी इसी प्रकार से बीत जायगे, परन्तु सदा रहनेवाली चीज एक " धर्म " है अंततक जो कुछ धर्मकार्य किये हैं. उन सब का फल हमारे साथ है और आगे को जो कुछ धर्म करेंगे उस का बल भी हमारी आत्मा में इकट्ठा होता रहेगा, शरीर छूट जाने पर यहां की सब चीजें यहीं रह जायगीं. हमारे साथ कुछ न जायगा धर्म ही केवल हमारे संग जायगा और परलोक में हम लोग को नित्य सुख देगा, जिस सुख का घटाव नहीं, जो सुख दिन २ बढ़ता है वह सुख सदाही रहता है. इस लिये बुद्धिमान् स्त्रियें संसार के नाशवान सुख में मन न लगाय कर नित्य सुख की प्राप्ति होने के लिये धर्म का साधन किया करती हैं, पहले ही कह चुके हैं कि पतिसेवा की समान स्त्रियों के लिये और कोई धर्म नहीं है. परन्तु इस धर्म की सब से ऊंची पदवी कहां है ? इस का सब से ऊंचा साधन क्या है ? पति का हित करने के लिये जो अवश्यकता हो प्राण तक दे देना; या मरते दमतक पति के हित करने में तय्यार रहना यही सब से ऊंचा साधन है.

जो अन्त समय स्वामी के हित करने का व्रत ग्रहण कर ले-

ती हैं उनकाही पतिव्रत धर्म पूर्ण होता है; और वही अनंत समय तक स्वर्ग को पाती हैं.

हृष्टे भवति सा हृष्टा दुःखिते मयि दुःखिता ॥
प्रोषिते दीनवदना क्रुद्धे च प्रियवादिनी ॥ ३ ॥

[शान्तिपर्व १४४ । ९]

दोहा—हर्षित लखि हर्षित रहै, मन दुख लखि दुख पाय ॥
क्रोध समय मदभाषिणी, गत विदेश मुरझाय ॥ ३॥

अर्थ—मेरे आनन्द से आनन्द पावे, दुःखित होने पर दुःखित होती, मेरे परदेश जानेपर वह मुख मलीन करती, मेरे क्रोध करने पर वह प्यार से बोलती है वही पतिव्रता है ॥ ३ ॥

शिक्षा—पतिव्रता स्त्री का लक्षण क्या है? कैसे समझा जाय कि कौन स्त्री पतिव्रता है? जो पति के सुख से सुखी, पति के दुःख से दुःखी होती हैं पति के विरह में जो व्याकुल होती हैं, इस प्रकार जो पति के साथ हमदर्दी और प्रीति करती हैं अर्थात् मन से पति को प्यार करती हैं; केवल कर्तव्य ही समझाकर जो पति की सेवा नहीं करती; वही पतिव्रता है. यह बात तौ स्वभाव से ही होती है कि जिस से स्नेह हो; और उस के सुख से अपने को सुख और उस के दुःख से अपने को भी दुःख होता है. पुत्र के रोगी होने पर माता को जिस प्रकार का दुःख होता है वैसे ही उस के सुखी रहने पर आनन्द भी होता है, क्यौं कि अपने स्नेह के सुख-दुःख के साथ अपना सुख-दुःख जुड़ा रहता है वही भाव-प्रेम करनेवाले के मन का भी होता है, परन्तु उस के गुस्से से मिलान नहीं होता, वरन उस के क्रोध होने पर आप शांतही रहकर उस के क्रोध के रोकने की चेष्टा करते है, गुस्से के रोकने में जो मीठे वचन काम करते हैं

वह काम और किसी प्रकार से नहीं हो सकता इस कारण से पतिव्रता स्त्रियें पति के क्रोधित होने पर मीठे वचन ही बोला करती हैं; पति के गुस्से होने पर जो वे भी गुस्से ही हो जायँ तौ आपस के झगड़े में फिर प्रीति कहां पाइये इस लिये जो प्रीति को चाहनेवाली हैं, वे अपने प्यारे को कभी झगड़ा करने का अवसर नहीं देतीं और जब कि वह सदा यही सोचा करतीं कि " प्यारा कैसे प्रसन्न हो? " तब अकसर क्रोध आपस में पैदा नहीं हुआ करता, और किसी कारण से जो एक क्रोध करै भी तो दूसरे की नरमाई और प्यारे वचनों से वह टिक नहीं सकता; यदि यह बात ठीक है कि वात्सल्य अपने आप से ही पैदा होता है कोई जन इस को गुण बल या अपनी इच्छा से नहीं पाय सकता तौ भी यह बात है कि साधन करने से इस की उत्पत्ति बढोतरी हो सकती है. जो स्त्रियें अपने पति का वात्सल्य पाने की इच्छा करती हैं वह अपने पति के गुणों की ही तरफ अधिक दृष्टि रखती हैं दोषों की तरफ नहीं रखतीं. स्त्रियों को चाहिये कि पर पुरुष अपने पति से गुणों में हजार गुण श्रेष्ठ होय तौ भी उस की तरफ न देखें; और उस के गुण मन में न लावें इस प्रकार का विचार होने से निश्चय ही स्वामी में प्रीति और भक्ति जन्मेगी, और जब स्वामी देखेंगे कि मेरी स्त्री नरम सुशील और हमारी सेवा में लगी रहती है तौ वह उस के गुणों के वश में होकर क्या उस से वात्सल्य नहीं करेंगे ? यदि कोई स्वामी को वश करना चाहे तौ वशीकरण मंत्र नहीं है ? कि पातिव्रत्य धर्म का पालन करे. यह नहीं कि स्याने दिवाने और धूर्त वा पाजी मूर्ख स्त्रियों की सल्लाह से क्या पति को उल्लू का मास खिला दें. ऐसे २ उपाय करने से बहुतसी स्त्रियां अपने पति से हाथ धो बैठी हैं. देखो, जब श्रीरामचन्द्रजी ने दोषरहित सीताजी को वनवास दे दिया, तब पतिव्रता

सीताजी ने अपने स्वामी के ऊपर कुछ भी दोष न लगाया न कुछ कडवे वचन कहे. वरन यही कहा कि " मेरी और कुछ भी कामना नहीं, परन्तु हे आर्य्यपुत्र ! जहां रहें वहां अच्छे रहें और धर्म को न छोडें " इसलिये आजतक कहावत है कि " * नारी ना सीतासी नारी ना" और राजा नल अपनी स्त्री दमयंती को धोखा देकर महाभयंकर वन में निरुपाय और अनाथ अवस्था में छोडकर चले गये; तौ भी सती दमयंती ने उन के ऊपर कुछ क्रोध या रोष नहीं किया.

पतिव्रता पतिगतिः पतिप्रियहिते रता ॥
यस्य स्यात्तादृशी भार्या धन्यः स पुरुषो भुवि ॥४॥
[शान्तिपर्व १४४ । १०]

गीतिका—पतिव्रता पतिगति पतिप्रिय हित चाहनेवाली अहै।
ते धन्य या संसार में जो नारि पति ऐसी लहै॥४॥

अर्थ—जो नारी पतिव्रता, और पति ही जिस की गति है, और जो पति के प्यारे हितकारी काम में सदा लगी रहती है जिस के पास ऐसी भार्या है वही पुरुष पृथ्वी पर धन्य है ॥ ४ ॥

शिक्षा—पतिव्रता स्त्रियों को चाहिये कि और किसी लालच की आशा से या इन्द्रियसुख की लालसा से पति की सेवा नहीं करें. उन को ऐसा उचित नहीं है कि, पति जबतक पालन-पोषण करने में समर्थ रहे जबतक वह सुन्दर और जवान है जबतक इन्द्रियों को सुख देने की ताकत रक्खे; तबतक ही उसकी सेवा करें, वरन सदा ही पति की सेवा करनी उचित है. पति चाहें निर्धन या बूढा दुर्बल हो जाय परन्तु सदा ही उस की सेवा करनी मुनासिब है. अर्थात सब अवस्था में उन को

* यह वाक्य दोनों तरफ से एकसा पढा जाता है.

प्रीतिसहित पति की सेवा करनी ठीक है; क्योंकि पति ही स्त्रियों की गति है. वह पति के प्यारे और हितकारी कामों में सदा लगी रहैं, पति का हितकारी काम उन को इस भांति से करना चाहिये कि जिस से वह काम उन को बुरा न लगे. क्योंकि, बुरी रीति से किया हुआ हितकारी काम भी भला नहीं लगता. स्त्रियों को पति का प्रेम प्राप्त करने के लिये अहित कार्य नहीं करना चाहिये; क्योंकि अहितकारी प्रिय काम तो केवल खुसामद करना है. अनेक स्त्रियें पति की सेवा करती हैं परन्तु मुँह बिगाड़कर बक २ के साथ करती हैं और अनेक ऐसी हैं कि पति का उपकार करती हैं परन्तु स्वामी पर कड़ी होकर तथा उन को दुःख देकर करती हैं. और अनेक ऐसी विचार किया करती हैं कि, सत्य हो, मिथ्या हो, पति का उपकार हो, या हानि हो, परन्तु पति को प्रसन्न रखने से ही सब मामला ठीक है; जो पति शराब पिये, रंडीबाजी करे, चोरी करे, या और दूसरे कुकर्म करे, हम को इस से क्या? इस प्रकार का विचार करके जो स्त्रियें पति के कुकर्मों को कुछ नहीं गिनतीं "बलकि पति प्यार करेंगे" यह समझ उस के कुकर्मों में आप भी सहायता करती हैं; वे स्त्रियें पतिव्रता नहीं केवल अपना मतलब चाहनेवाली हैं, जो सदा पति का हित करने के सिवाय अहित नहीं चाहतीं और उस को प्रसन्न रखती हैं वे ही असल पतिव्रता हैं. पतिव्रता स्त्रियें छल कपट और झूंठ बोलने से भी घिन करती हैं. जो छल नहीं जानतीं वे सत्य कहनेवाली सीधी सादी और बुद्धिमान होती हैं. झूंठ बोलना सब पापों की जड है. जो धर्मवान और विचारवान हैं वे कभी झूंठ बात झूंठा व्यवहार नहीं करतीं. क्यों कि वे जानती हैं कि धर्म सत्य से खडा रहता है; और झूंठ से दूर हो जाता है; रेते के बांध और खंडेरे घर की समान झूंठ नहीं टिक सकता, तिस पर मिथ्या और

कपट के व्यवहार से धर्मोपार्जन भी नहीं होता जिस के धर्मोपार्जन नहीं उस का कल्याण कहां ? सती पतिव्रता स्त्रियें जैसा पति में प्रेम रखतीं; देव, धर्म, गुरु, शास्त्र म भक्ति करतीं हैं और यह विचारती हैं कि देव, धर्म, गुरु, शास्त्र हमारा मातापिता है, इन पर भक्ति रखने से पति के प्रेम में बाधा नहीं पडेगी. बलकि देव-गुरु- शास्त्रभक्ति का जो प्रेम है वही मजबूत और बडा टिकाऊ होता है, धर्म ही पवित्र प्रेम का बंधन है, धर्म के विना प्रेम नहीं टिकता इस लिये जिन पुरुषों की स्त्रियें पति से प्रेम करनेवाली और धर्मवान हैं वे ही संसार में धन्य हैं.

नास्ति भार्यासमो बन्धुर्नास्ति भार्यासमा गतिः ॥
नास्ति भार्यासमो लोके सहायो धर्मसंग्रहे ॥५॥
[शान्तिपर्व १४४ । १६]

दोहा—भार्यासम गति बंधु नहिं, देखहु हृदय विचार ॥
है सहाय या लोक में, धर्मविषय अतिनार ॥५॥

अर्थ—भार्या की समान और बंधू नहीं है, भार्या की समान और गति नहीं, इस लोक में धर्मसाधन के विषय स्त्री की समान और कोई सहाय भी नहीं है ॥ ५ ॥

शिक्षा—स्त्री पुरुष आपस में जिस प्रकार बंधु और सखा (मित्र) हो सकती हैं ऐसा और कोई नहीं हो सकता. यही सदा एक दूसरे के निकट रह सकती हैं. ये ही एक दूसरे की आवश्यकता और मनोरथ को पूरे कर सकती हैं, इसी कारण से स्त्री अपने स्वामी का आधा अंग कहलाई हैं; जो पुरुष अपनी स्त्री से अधिक किसी दूसरी स्त्री या पुरुष के साथ स्नेह करते हैं और जो स्त्री अपने प्यारे स्वामी से

अधिक किसी दूसरी स्त्री या पुरुष को चाहती है उन की आशा मिट जाती है. स्वामी स्त्री की समान और कोई स्त्री पुरुष अपना साथ सदा के लिये नहीं दे सकता, स्त्री के बिना और कौन अपनी सहायता कर सकती या दुःखदर्द में साथी हो सकती हैं ? स्त्री के शुद्ध प्रेम की बराबर जगत् में और कौनसी चहीती चीज है ? इस लिये स्त्री की परम गति जैसे स्वामी है वैसे ही स्वामी की परमगति स्त्री है; स्त्री केवल संसारी सुखों की ही नहीं; बलकि धर्म की भी सहायता करनेवाली है. कर्दममुनि ने कहा है कि धर्म की लडाई में स्त्री किले की समान है; उस का आश्रय लेकर काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर इत्यादि शत्रुओं को जीत लिया जा सकता है; परन्तु स्त्रीरहित पुरुष काम वगैरह दुश्मनों से जल्दी हार जाता है, ऐसे स्त्री को पुरुष भी धर्मसाधन करने का एक उपाय है; पति का आसरा लेने से कामक्रोधादि स्त्री को खोटे मार्ग में नहीं ले जाय सकते. पति का प्यारा और हितकारी कार्य करना ही स्त्री का परम धर्म है. इस लिये स्त्री के वास्ते एक पति ही धर्म करने बडा उपाय है.

पतिप्रिया पतिप्राणा सा नारी धर्मभागिनी ॥
शुश्रूषां परिचर्य्यां च करोत्यविमनाः सदा ॥६॥
[अनुशासनपर्व १४६ । ४५-४६]

दोहा—पतिप्राणा पतिव्रता जो, अरु प्रसन्नचित होय ॥
सदा स्वामिसेवा करे, धर्मभागिनी सोय ॥ ६ ॥

अर्थ—जो नारी पतिव्रता और पति से स्नेह करके सदा प्रसन्न होकर स्वामी की सेवा टहल करती है वही धर्म का भाग पाती है ॥ ६ ॥

शिक्षा—पतिव्रता स्त्रियों का एक लक्षण और है कि, वह पति की सेवा और काम-काज अपने हाथ से किया करती है, नौकर-

चाकरों के ऊपर नहीं डालती इस से उन को कुछ क्लेश नहीं होता बलकि आनंद होता है; वह एक दो दिन नहीं; बलकि जन्मभर ऐसा ही किया करती है. इस प्रकार की स्त्रियें ही धर्म का फल पाती हैं.

शुश्रूषां परिचारं च देवतुल्यं प्रकुर्वती ॥
वश्याभावेन सुमनाः सुव्रता सुखदर्शना ॥७॥

[अनुशासनपर्व १४६।४१]

चौपाई—समुझि देवसम निज प्रिय पति को, ह्वै प्रसन्न मन धारि सुमति को। सुखदायक दीखत वह नारी, करै स्वामिसेवा सुखकारी ॥ ७ ॥

अर्थ—वह पति को देवता की समान समझ करके उस के वश हो प्रसन्नमन से उत्तम व्रत धारण कर स्वामी की सेवा टहल करतीं और प्रसन्न रहतीं हैं. ॥ ७ ॥

शिक्षा—बहुत स्त्रियें स्वामी की सेवा करती हैं; परन्तु अपनी मरजी के माफक वह इस का विचार नहीं करती कि एक सेवा पति की मनमानी होती है वा नहीं? परन्तु सती पतिव्रता स्त्रियें पति के वश हो उस की सेवा करती हैं; और इस सेवा से कुछ अनमनी होकर सदा प्रसन्न रहती हैं; क्योंकि वे पतिसेवा को अपना परमव्रत समझती हैं. ऐसी स्त्रियें पति की अधिक प्यारी होती हैं, उन का कोमल मधुर शान्त धर्मभाव देखकर सब ही उन की भक्ति करते हैं; वह साक्षात् देवी और लक्ष्मी की समान समझी जाती हैं.

भर्तृवर्जं वरारोहा सा भवेद्धर्मचारिणी ॥
दरिद्रं व्याधितं दीनमध्वना परिकर्शितम् ॥८॥

[अनुशासनपर्व १४६।४३-४४]

चौपाई—दीन दुखी अरु पीडित जनपर, मारग थकित मनुष के तनपर । करहिं अनुग्रह जो पतिप्यारी, तेही धर्म चारिणी नारी॥ ८ ॥

अर्थ—जो पति की प्यारी सुन्दर स्त्रियें दरिद्र, पीडित, दीन, दुःखी, मार्ग चले हुए थकित मनुष्य पर दया करती हैं वेही धर्म की आचरण करने-वाली हैं ॥ ८ ॥

शिक्षा—सती स्त्रियें पति सेवा करती हुई और भी करने योग्य कार्य्यों को नहीं भूल जातीं. वह पति की सेवा से पति का दिया आदर सन्मान पाकर और सुन्दर रूपवती होकर भी दीनमन, (गरुर-गर्व) नहीं करतीं. मन के वास्ते जो जो कर्तव्य है, उस को वह पालन करती हैं, दीन, दुःखी, दरिद्रों पर सदा दया करती हैं वह अपने वित्तसमान सदा उन का उपकार भी करती रहती हैं.

श्वश्रूश्वशुरयोः पादौ तोषयन्ती गुणान्विता ॥
मातापितृपरा नित्यं या नारी सा तपोधना॥९॥

[अनुशासनपर्व १४६।५१]

दोहा—सास श्वशुर के चरण को, पूजहिं दिन अरु रैन ॥
भक्ति करहिं पितु-मात सों, वही नारि तप ऐन ९

अर्थ—जो नारी गुणवती हो सास-श्वसुर के चरणों को सेवती हैं, पिताओं की भक्ति करती हैं वही तपस्विनी (तपस्या करनेवाली) हैं ॥ ९ ॥

शिक्षा—सती पतिव्रता स्त्रियें जैसे दीन-दुःखी के ऊपर दया करती हैं, वैसे ही बडों की भक्ति करती हैं; और आदर-सन्मान सहित सास-श्वसुर की सेवा करती हैं मातापिता में

परम भक्ति रखती हैं; जरूरत होने पर वित्तसमान उन का उपकार भी तन-मन से करती हैं वेही स्त्रियें तपस्विनी कहलाती हैं.

सुप्रतीता विनीता च सा नारी धर्मभागिनी ॥
बिभर्त्यन्नप्रदानेन कुटुम्बं चैव नित्यदा ॥ १० ॥
[अनुशासनपर्व १४६।४६]

दोहा—अतिविनीत अरु स्नेहसह, देहिं अहार सुदान ॥
पालहि सदा कुटुम्ब को, ते तिय धर्मनिशान ॥ १० ॥

अर्थ—जो नारी अतिशय स्नेहवती, विनीत और नित्य अन्नव्यंजनादि भोजन कराके कुटुम्ब को पालती है वही धर्म को प्राप्त करती है ॥ १० ॥

शिक्षा—सती पतिव्रता स्त्रियें पति की सेवा बडों की भक्ति और दीनदुःखियों पर दया करके ही केवल सन्तुष्ट नहीं होतीं, बलकि वह अपने कुटम्ब का भरण-पोषण और पालन भी करती हैं. वह सब के साथ स्नेह रखतीं किसी से झगडा या क्लेश नहीं करतीं; किसी से ओट नहीं रखतीं; दूसरे किसी को अधिक भाग्यवान् और सुखी देखकर डाह नहीं करतीं. इन सब गुणों के रहने पर भी वे अभिमान न करके सदा नरम और विनवती रहती हैं. इस प्रकार की स्त्रियें ही धर्म के मार्ग को पाती हैं.

पुण्यमेतत्तपश्चैतत् स्वर्गश्चैष सनातनः ॥
या नारी भर्तृपरमा भवेद्भर्तृव्रता सती ॥ ११ ॥
[अनुशासनपर्व १४६।५४]

दोहा—जो नारी पतिव्रत गहै, करै स्वामि को ध्यान ॥
पुण्य तपस्या पायकर, लहै स्वर्ग निर्वान ॥ ११ ॥

अर्थ—जो स्त्री सती पतिव्रता और पतिपरायण

होती हैं, उन को इस से ही पुण्य और तप प्राप्त होता है; और इस से ही सनातन स्वर्ग मिलता है.

शिक्षा—जो इस प्रकार से पति की सेवा करती हैं और केवल अपने पति का ही मान रखती हुई सत्यधर्म को पालती हैं उन को इस से ही पुण्य की प्राप्ति हो सकती है; तीर्थ उपवास, व्रत, पूजा या नियम आदिक सब धर्म स्वामी की सेवा करने पर प्राप्त हो सकते हैं.

या साध्वी नियताचारा सा भवेद्धर्मचारिणी ॥
श्रुत्वा दम्पतिधर्मं वै सहधर्मं कृतं शुभम् ॥१२॥

[अनुशासनपर्व १४६।३८–३९]

चौपाई—सुनि पतिसहित धर्म को सारा, कारज करहिं धर्मअनुसारा । पुण्यभाव सौं अवगत होई, धर्मवती है तिय जग सोई ॥ १२ ॥

अर्थ—जो सती स्त्री दंपती (स्त्रीपुरुष) धर्म को सुनकर और स्वामी के साथ धर्मकार्य करने के फल को जानकर नियमसहित धर्म को करती हैं वही धर्मचारिणी होती हैं ॥ १२ ॥

शिक्षा—पहले जो नारीधर्म कह आये हैं उस को सुनकर और इस के फल को जानकर जो इस चलन से चलेंगी वही स्त्रियें धर्मात्मा हो इस भवयश और वैभव में शुभगति के अनुपम सुख भोगकर अन्त में अविनाशी मोक्षसुख को पावेंगी.

॥ चौपाई ॥

तत्व पुरानन को सब सारा, अरु स्मृती को सार निकारा ॥
जो याको नित पढ़ै पढ़ावै, बैठ तियन के माझ सुनावै ॥ १ ॥

निःसंशय जो कहहि बखानी, पावहि ते अनंत फल प्रानी॥
तीरथ व्रत पूजा के जेते, याके पढे पुण्य हैं तेते ॥ २ ॥

॥ दोहा ॥

सब भगिन सो जोर कर, यही विनय सब काल ॥
पालहु नित पतिव्रतधरम, भाषत पन्नालाल ॥ ३ ॥
नारि करहि निज स्वामिसे, निशदिन अविचल प्रेम ॥
दरश लाभ निज स्वामि को, गिनहि अपूरव नेम ॥४॥
पितामाहि निज भक्ति रख, मातु लडैती होय ॥
पतिचरणन मैं प्रीति रख, चिंता डारहु खोय ॥ ५ ॥
श्रीयुत प्रियवर मित्र मम, बुध बलदेव प्रसाद ॥
तिन सहाय इस ग्रन्थ मैं, भई सुआशीर्वाद ॥ ६ ॥
तिह कारण शुभ ग्रन्थ यह, नारीधर्मप्रकाश ॥
प्रगट भया तियहित करन, होउ सदा जगवास ॥ ७ ॥

इति नारीधर्मप्रकाश समाप्त ।

पुस्तक मिलनेका ठिकाना—
गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
"लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना
कल्याण-मुंबई.

सूचना.

अपने यन्त्रालय में वैदिक, वेदान्त, पुराण, धर्मशास्त्र, न्याय, छन्द, ज्योतिष, काव्य, अलंकार, चम्पू, नाटक, कोश, वैद्यक, सांप्रदायिक-स्तोत्रादि संस्कृत ग्रन्थ और हिंदुस्थानी भाषा के अनेकानेक ग्रन्थ जो विक्रयार्थ प्रस्तुत हैं उन की कीमत और डाकमहसूल समझने के लिये आध आने का टिकट आने से विना दाम बडा सूचीपत्र भेजा जायगा.